अयोध्या संबंधी निर्णय के सकारात्मक पक्ष

पिछले दिनों अयोध्या में राम जन्मभूमि से जुड़े विवादास्पद मामले में उच्चतम न्यायालय की पाँच सदस्यीय पीठ ने अपना निर्णय दिया है।

इस निर्णय में न्यायालय ने यह स्पष्ट कर दिया कि देश में शांति और स्थिरता बनाए रखने के लिहाज से इलाहाबाद उच्च न्यायालय के दिये गये निर्णय को लागू कर पाना संभव नहीं हो सकता।

धर्मनिरपेक्षता, अल्पसंख्यकों और कानून के शासन के रक्षकों एवं खासतौर पर मुस्लिम हितों के रक्षकों को न्यायालय के इस निर्णय से कतई निराश नहीं होना चाहिए। हालांकि यह सच है कि न्यायालय ने कानून की सही व्याख्या करने के बाद उसे तथ्यों पर गलत ढंग से लागू किया है।

यहाँ हम न्यायालय के कई ऐसे निष्कर्षों पर नजर डालेंगे, जिनका स्वागत किया जाना चाहिए।

1. विश्व हिन्दू परिषद् ने 3000 मस्जिदों के बारे में दावा कर रखा है। न्यायालय ने इस निर्णय के माध्यम से फिर कहा है कि धर्मनिरपेक्षता, संविधान की मूल संरचना का हिस्सा है। पूजा स्थल अधिनियम, 1991 संविधान के मूलभूत मूल्यों की रक्षा करता है। यह अधिनियम एक ऐसा विधायी हस्तक्षेप है, जो हमारे धर्मनिरपेक्ष मूल्यों की अनिवार्य विशेषता, गैर-प्रतिगमन (Non-Retrogression) को संरक्षित करता है। न्यायालय के इस आश्वासन से सभी आशंकाओं पर विराम लग जाता है।

2. अनुच्छेद 25 में धार्मिक स्वतंत्रता के विषय पर न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि हमें उपासकों की आस्था और किसी धार्मिक दस्तावेज के पूर्ण एवं चरम रूप की व्याख्या करने के प्रयास को अस्वीकार कर देना चाहिए।

कुछ हिन्दुओं ने ऐसा तर्क दिया था कि इस्लामिक धर्मग्रंथों के अनुसार बाबरी मस्जिद कोई वैध पूजा स्थल नहीं है। इस तर्क को न्यायालय ने अस्वीकार कर दिया, और कहा कि, ''आस्था एक व्यक्तिगत मामला है।''

3. न्यायालय ने सुन्नी वक्फ बोर्ड की इस अपील को स्वीकार कर लिया कि रामलला का जन्मस्थान अपने आप में न्यायिक न्याय से संबंधित व्यक्ति नहीं है। इससे रामलला के मुकदमे को झटका लगा। लेकिन वास्तव में इससे भविष्य में होने वाले विवादों पर विराम लग गया।

4. न्यायालय ने मुस्लिमों के केन्द्रीय तर्क को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि राम मंदिर का विध्वंस करके मस्जिद का निर्माण नहीं किया गया है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण को भी ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिला है कि वहाँ पहले किसी मंदिर को तोड़ा गया है।

5. न्यायालय ने यह भी कहा कि एएसआई की रिपोर्ट के अनुसार मस्जिद के निर्माण के लिए मंदिर के अवशेषों के उपयोग का कोई प्रमाण नहीं मिलता है।

6. मुस्लिमवादियों के इस तर्क को भी स्वीकार कर लिया गया कि आस्था या पुरातात्विक खोजों के आधार मात्र पर, किसी के अधिकार को स्वीकार नहीं किया जा सकता। भविष्य के विवादों के लिए यह एक बड़ी जीत की तरह है।

7. मुस्लिम वादियों की उस अपील को भी न्यायालय ने स्वीकार कर लिया, जिसमें उन्होंने तर्क दिया था कि एक आस्ट्रियाई यात्री के वर्णन के अनुसार बाबरी मस्जिद के निर्माणदि के तथ्यों को नहीं माना जा सकता, क्योंकि ये सही नहीं हैं।

8. 18वीं शताब्दी से पहले बाबरी मस्जिद के स्थान पर मंदिर होने का कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिलता है। इसे भी न्यायालय ने स्वीकार कर लिया। न्यायालय ने इसका आधार उन हिन्दू साक्ष्यों को बनाया, जिन्होंने वाल्मिकी "रामायण" या तुलसीदासकृत "रामचरितमानस" में राम के जन्म स्थान का कोई उल्लेख नहीं किया है।

पूर्ण निर्णय में यही एक सर्वाधिक विवादास्पद बिन्दु रहा। इसे न्यायालय ने धार्मिक आस्था की स्वतंत्रता का मामला ठहराया।

मुस्लिम वादियों ने इस मामले में किसी हक का दावा नहीं किया था। अतः उन्हें अंतिम निर्णय से प्रभावित नहीं होना चाहिए। उन्हें 'सम्पत्ति की सुपुर्दगी' (Delivery of Possession) से आश्वस्त हो जाना चाहिए। न्यायालय ने स्वीकार किया कि 1949 में उन्हें उनके अधिकार से वंचित कर देना गलत था। यह भी माना गया कि उन्हें अन्यत्र पाँच एकड़ भूमि देने के बजाय, आंतरिक परिसर का स्वामित्व दिया जाना चाहिए था।

तत्पश्चात् न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद का हवाला देते हुए भूमि को हिन्दुओं को सौंपा, और मुस्लिमों से इसे छोड़ देने की अपील की। संविधान का अनुच्छेद 142, उच्चतम न्यायालय को यह अधिकार देता है कि किसी मामले के निपटारे में पूर्ण न्याय करने हेतु वह इस अनुच्छेद का आह्वान कर सकता है।

'द हिन्दू' में प्रकाशित फैज़ान मुस्तफा और 'अयमन मोहम्मद के लेख पर आधारित। 2 नवम्बर, 2019